Impact Factor (SJIF): 6.126 E-ISSN: 2583-1615, P-ISSN: 3049-3498

International Journal of Research in Academic World

Received: 06/August/2025 **IJRAW:** 2025; 4(9):123-126 **Accepted:** 18/September/2025

वैदिक ग्रन्थों में पर्यावरणीय नैतिकता के प्रतीक देवत्व की संकल्पना

***[1]विजय महावर**

*[1]सहायक आचार्य, इतिहास (अतिथि संकाय), महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय, अजमेर, राजस्थान, भारत।

सारांश

वैदिक ग्रन्थों में अन्तर्निहित पर्यावरणीय नैतिकता अपने प्रारम्भिक स्वरुप से ही पारिस्थितिक संतुलन को बनाये रखना साथ ही मानव और प्रकृति के पारस्परिक संबंधों के व्यावहारिक दृष्टिकोण को प्रोत्साहित करना रहा है।ऋग्वैदिक प्रकृति में देवत्व की संकल्पना ही पर्यावरण नैतिकता को बढ़ावा देती है और पर्यावरण पर प्रभुत्व के स्थान पर ब्रह्मांडीय व्यवस्था ऋत के अंतर्संबंध और सामंजस्य की भावना को संतुलित करती हैं। देवत्व की संकल्पना प्राकृतिक जगत में आन्तरिक अभिव्यक्ति और प्रतीकात्मक के रुप में – पृथ्वी को मां और पिता को आकाश के परिप्रेक्ष्य में श्रद्धा व पवित्र नैतिक प्रबंधन के रुप में की जाती है। पृथ्वी, आकाश, जल, वायु और अग्नि पंच तत्वों से निर्मित ब्रह्मांड जो एक मौलिक अंतर्संबंधों को बनाये रखने के लिए प्रेरित करते हैं। ऋग्वेद में ब्रह्मांड के पृथ्वी, आकाश और अंतरिक्षीय देवताओं के संकुल को एक ब्रह्मांडीय परिवार के रुप में दृष्टिगत किया गया हैं। देवत्व ही प्रकृति का सक्रिय संसाधन है। सामाजिक व्यवस्था के लिए प्रकृति का दोहन निषिद्ध है। देवत्व की संकल्पना ही पर्यावरणीय नैतिकता के लिए एक आध्यात्मिक भावना और मानव कल्याण को आधार प्रदान करती है।

मुख्य शब्दः ऋग्वेद, ब्रह्मांड, देवत्व, पर्यावरणीय नैतिकता।

प्रस्तावना

वैदिक धर्मिक परंपराएं समान रुप से भिन्न सांस्कृतिक, सामाजिक, दार्शनिक और नैतिक प्रणालियों से गुंथी हुई हैं जो एक विशाल ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में विकसित होकर वर्तमान में पारंपरिक दृष्टिकोण के आधार पर परिवर्तित वैज्ञानिक प्रतिमानों में प्रकृति की देवत्व की संकल्पना में पर्यावरणीय नैतिकता और मूल्यों को संतुलित व सवंर्द्धित करने में संलग्न है। प्रकृति और उसकी रचनाओं के प्रति श्रद्धा सामूहिक रुप से मानवीय धर्म का एकीकृत नैतिक सिद्धांत है। सृष्टि का उद्भव, विकास और विस्तार प्रकृति के पांच तत्वों के संतुलन का परिणाम है, जो वास्तविक और प्रतीकात्मक रुप से पूजनीय है।प्रकृति और मानव का पारस्परिक संबंध ही पर्यावरणीय नैतिकता है। प्रकृति का देवत्व के रुप में मानवीकरण ब्रह्माण्ड की गहन अंतर्संबंधता ही पर्यावरण नैतिकता की रक्षा कर पारिस्थितिक संतुलन को बनाए रखने के नैतिक कर्तव्य को स्थापित करता है।

उद्देश्य

इस शोध पत्र का उद्देश्य वैदिक ग्रन्थों में पर्यावरणीय नैतिकता के प्रतीक देवत्व की संकल्पना के द्वारा वर्तमान के भौतिक पर्यावरण में पारिस्थितिक जागरुकता है।

प्राविधि

विषय से संबंधित साहित्य का संग्रहण कर तुलनात्मक अध्ययन के द्वारा विश्लेषण, मूल्यांकन और व्याख्या करना है। यह शोध पत्र वैदिक ग्रन्थों में वर्णित पर्यावरणीय नैतिकता के प्रतीक देवत्व की संकल्पना के ज्ञान का अन्वेषण करता है।

महत्व

वर्तमान में आधुनिक वैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य में पारिस्थितिक संतुलन को बनाए रखने के लिए वैदिक ग्रन्थों में वर्णित पर्यावरणीय नैतिकता के प्रतीक देवत्व की संकल्पना को मूर्त रुप प्रदान करने पर ही आध्यात्मिक कल्याण और

***Corresponding Author:** विजय महावर

मानव समृद्धि दोनों के लिए ही यह शोध पत्र विषय के महत्व को प्रतिपादित करता है।

संकल्पना

देवताओं की ऋग्वैदिक अवधारणा प्राकृतिक शक्तियों और घटनाओं के मानवीकरण के माध्यम से आंतरिक रुप से पर्यावरणीय नैतिकता से संलग्न है, जहां इंद्र, अग्नि, मौसम, सोम और वनस्पति जैसे देवता प्रकृति के महत्वपूर्ण घटकों को मूर्त रुप प्रदान करते हैं। प्रकृति को दिव्य मानकर उसकी इस इाराधना ने श्रद्धा और जिम्मेदारी की भावना को बढ़ावा दिया, ब्रह्मांड के साथ मानवता के अंतर्संबंधों पर जोर दिया और पृथ्वी, आकाश और जल निकायों की रक्षा करके पारिस्थितिक संतुलन को बनाए रखने के नैतिक कर्तव्य को स्थापित किया जो वर्तमान परिवेश में मानव कल्याण और समृद्धि के लिए आवश्यक है।

शोध पत्र

वैदिक उपाख्यानों के आधार पर 'वैदिक–देवताओं' की तीन श्रेणियाँ निर्धारित की गई हैं– भूलोकीय; द्यूलोकीय और अंतरिक्ष के देवता। इस देवसंकुल का अध्ययन किया जाए, तो अनेकऐसे 'देव–प्रतीक' मिल जाएंगे, जो किसी न किसी पर्यावरणीय या प्राकृतिक घटक के सूचक हैं। वस्तुतः वैदिक आर्यों ने देवताओं की कोरी कल्पना मात्र नहीं की, वरन् उनका देवलोक प्रकृति से उनके संपर्क, उनकी अनुभूति और उनके भावनात्मक उद्वेगों का विस्तार है। वे किसी प्राकृतिक घटना के सन्निकट आते हैं। उसका मानवीय उपयोग देखते और फिर उस आधार पर मानवीय चेतना को प्रभावित करने वाले देवता की परिकल्पना करत है। वस्तुतः उनका देवमण्डल उनकी अनुभूति का विस्तार है। यह अनुभूति निश्चित तौर पर 'प्रकृति' से उनके लंबे निरंतर संपर्क का परिणाम है।

युद्ध का देवता 'इंद्र' गूढ़ अर्थो में यह 'झंझाावत/बरसात' का प्रतीक है। इसी अर्थों में यह योद्धा भी है। इंद्र अकाल व सूखे से लड़ने का प्रतीक है। [1] और इस प्रकार इंद्र जल की मुक्ति का देवता है। [2] वस्तुतः इंद्र ने वृत्र नामक राक्षस का वध किया। वृत्र सूखे का कारण देवता है तथा जिसने 'जल' को बंदी बना लिया था। इसलिए इंद्र ने 'वृत्त' का वध करके जल को मुक्त किया। [3] यह कथा अपने आप में एक प्रतीकात्मक महत्त्व रखती है। जलसंकट संप्रति विश्व की बहुत बड़ी समस्या है। वृत्र उन मानवीय कारकों का प्रतीक है, जिसकी वजह से जल संकट जैसी त्रासदी उत्पन्न हुई है; जबकि इंद्र उन कारकों के निवारण का प्रतीक है। वैदिक–कालावधि में 'जल–संकट' की यह मौलिक अवधारणा है।

तुभ्यं इतिएतः मरूतः सुऽशेवाः अर्चन्ति अर्कम ं
सुन्वन्ति अन्धः।
अहिम् ओहानम् अपः आऽशयानम् प्र
मायाभिः मायिनम् सक्षत् इन्द्रः।।

'वृत्र–इंद्र' संघर्ष 'जल–संकट' की पूर्व गाथा जैसा प्रतीत होता है। इसी प्रकार 'सूर्य' जो कि समस्त भूलोक में ऊर्जा, शक्ति का आधार है– उसे 'सवित्र' के रूप में पूजित किया गया। एक ऋग्वैदिक श्लोक के अनुसार– स्वर्णमयी भुजाओं वाला सवित्र पृथ्वी और द्युलोक के बीच में सक्रिय है। वह रोगों को दूर करता है। वह सूर्य को निर्देशित करता है। [4] संभवतः यह सूर्य रश्मियों के औषधीय गुणों की तरफ संकेत किया गया है।

हिरण्यपाणिः सविता विऽचर्षणिः उभे इति।
द्यावापृथिवी इति अंतः इयते।
अपं अमोवाम् बाधते वेति सूर्यम्।
अभि कृष्णेन रजसा द्याम् ऋणोति।।

इसी प्रकार से 'विद्युत' या तडित् के देवरूपांकन के रूप में आर्यो ने मरुत की कल्पना की। इनकी संख्या 36–37 है। इन्हें रूद्र के पुत्र के रूप में वर्णित किया गया है। [5]

प्रये शुम्भन्ते जनयः न सप्तयः यामन्
रूद्रस्य सूनवः सुऽदंससः।
रोदसी इति हि मरूतः चक्रिरे वृधे
मदन्ति वीराः विदथेषु घृष्वयः।।

इसी प्रकार से विष्णु यद्यपि कि सूर्य का प्रतीक है। किंतु, वैदिक उपाख्यानों में उसका सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य 'वृत्रहन' में इंद्र के सहायक के रूप में कार्य करना। [6] यद्यपि कि ऋग्वेद में 'रूद्र' को मरूतों के पिता के रूप में चिह्नित किया गया है। किंतु, वास्तव में 'रूद्र' अपने आरंभिक स्वरूप में आपदाओं से लोक की रक्षा करने वाले देवता हैं। एक ऐसी शक्ति, जो प्राकृतिक आपदाओं से लोक की रक्षा करता था। इस रूप में 'रूद्र' पर्यावरणीय नैतिकता के एक प्रतीक के रूप में देखा जा सकता है। एक ऐसी नैतिक शक्ति, जो प्राकृतिक आपदाओं को अवरोधित करती है। रूद्र की प्रार्थना करते समय अनेक आह्वान मिलते हैं; यथा– ''हमें सूर्य से वंचित मत करो। [7] तुम्हारी औषधियों से हम शतायु अवस्था प्राप्त करें। [8] तुम समस्त प्राणियों के प्रियतम हो। हमें पाप से मुक्ति की ओर ले चलो।[9] इन उक्तियों से स्पष्ट होता है कि वैदिक–कालावधि में भी प्राकृतिक आपदाओं के प्रति एक सचेत–स्वर कार्यरत था। उन्होंने न केवल प्राकृतिक शक्तियों को दैवीय रूप दिया वरन् प्राकृतिक आपदाओं के रक्षक शक्तियों की कल्पना को एक नैतिक स्वरूप प्रदान किया। रूद्र का स्वरूप क्रुद्ध के साथ–साथ आशीर्वाद देने वाला भी है।

आ ते पितः मरूताम् समन्म्एतु मा नः
सूर्यस्य सम्ऽदृशः युयोथाः।।
त्वाऽदत्तेभिः रूद्र शमऽतमेथिः शतम् हिमाः
आशीष भेषजेभिः।।
श्रेष्ठः जातस्य रूद्र श्रिया असि तवःऽतमः तवसाम्
वज्रबाहो इतिं वज्रबाहो।।

वैदिक मिथक एवं पर्यावरण से उसके संबंधों की चर्चा करते समय 'अपांनपात' और 'मित्र' की चर्चा अत्यंत उल्लेखनीय है। अपांनपात् ऋग्वेद के एक पूर्ण सूक्त में उपस्थित हुआ है। इसके अतिरिक्त 'जल' के लिए प्रयुक्त दो सूक्तों मे ं 'अपांनपात्' आया है। एक स्थान पर इसका उल्लेख 'अग्नि' के साथ भी आया है। इसलिए इसका प्रतीकांकन निर्धारित करना थोड़ा सा कठिन है। ए0ए0 मैकडॉनेल के अनुसार यह जल की ध्वनि या उसकी आत्मा के संदर्भ (spirit of water) में आया है। [10] इस रूप में भी देखा जाए, तो यह महान वैदिकों की महान परिकल्पना है। जो प्रकृति के इतने करीब थे कि उसकी ध्वनि एवं आत्मा तक के प्रतीकांकन के स्तर तक गये। ये उनकी पर्यावरण संचतना का ज्वलंत उदाहरण है। वहीं 'मित्र' जा ं बारम्बार वरूण के संदर्भ में आया है, वस्तुतः सौर्य देवता का एक प्रतीक है। [11]

अभि यः महिना दिवम्
मिचः बभूवं सऽप्रथाः
अभिः श्रवःऽभिः पृथिवीम्।।

ठीक वैसे ही उषा[12] सूर्योदय की प्रतीक देवी थी। पर्जन्य बादलों के देवता थे। बरसात इसका प्रमुख गुण था। इसे वृक्षों के संरक्षक एवं राक्षसों के हन्ता के रूप में ऋग्वेद में वर्णित किया गया है। [13] इसे पृथ्वी पर नियमों के संस्थापक, वृक्षों, औषधियों, जंतुओं के रक्षक के रूप में देखा गया है। [14]

वि वृक्षान् हन्ति उत हन्ति रक्षसः
विश्वस्य विभाय भुवनम् महाऽवधात्।
उत अनागाः ईषते वृष्णऽवतः
यत पर्जन्यः स्तनयन् हन्ति दुःऽकृतः
यस्य वृते पृथिवी नन्नमीति यस्यं व्रते शफवज्जर्भुरीति
यस्य व्रते ओषधीः विश्वरूपाः
सः नः पर्जन्यः महि शर्म यछ।।

कुछ अन्य देवरूपों एवं उनके स्वरूपों में जो प्रकृति, उसके घटक एवं स्वय पशुरूपों के प्रतीक है। इन देवरूपों में पूषन, सूर्य, आश्विन, वरूण, मण्डूक, विश्वदेव, सोम प्रमुख है। पूषन को कहीं–कहीं पशुओं का देवता तो कहीं कहीं सूर्य के साथ संबंधित किया गया है। दोनों ही स्थितियों में ये पर्यावरणीय नैतिकता के सिद्धांत के अनुकल है। यह पशुओं का रक्षक, संरक्षक एवं प्रतिनिधि देवता है। एक स्थान पर यह प्रार्थना की गई है कि पूषन हमारे गौओं की रक्षा करे। हमें अश्व प्रदान करे। हमे ं लूट का माल प्रदान करें। [15]

पूषा गाः अनुंएतु नः
पूषा रक्षतु अवेतः
पूषा वाजम् सनोतु नः।।

यहाँ तक कि पशुओं की रक्षा की भी बात की गई। [16]

माकिः नेशत् माकीम् रियत् माकीम् सम् शारि केवते अश
अरिष्टाभिः आ गहि।।

जल प्रकृति का एक अत्यंत महत्त्वपूण घटक है। यहाँ तक कि शास्त्रों में उसे अग्नि को उत्पन्न करने वाली माता कहा गया है। जल मनुष्यों के पोषण के लिए अपना पवित्र जल प्रदान करती है। जल चराचर जगत् की माता ह। जल को व्यक्तियों के पापमोचक के रूप में भी व्याख्यायित किया गया है। जल को पापमोचक मानते हुए उससे आराधना भी की गई है। [17]

याः आपः उत वा स्रवन्ति
खनित्रिमा उत वा याः स्वयंऽजाः
समुद्रऽअर्थाः याः भुचयः पावकाः
ताः आपः देवीः इह माम् अवन्तु।।

अन्यत्र लिखा है कि जिसके जल के सेवन से देवता रोमांचकारी शक्ति प्राप्त कर लेते हैं, हम उस जल की आराधना करते हैं। [18]

यासु राजा वरूणः यासु सोमः
विश्वे देवाः यासु ऊर्जम् मदन्ति।
वैश्वानरः यासु अग्नि प्रऽविष्टः
ताः आपः देवीः इह माम् अवन्तु।।

पर्यावरणीय नैतिकता के स्रोत के रूप में जा सबसे महत्त्वपूर्ण देवता है, वह हैं– 'वरूण'। वस्तुतः ऋत्, जो कि सृष्टि की नियमितता का द्योतक था, के प्रतीक के रूप में वरूण की कल्पना की। वरूण वस्तुतः भौतिक एवं नैतिक व्यवस्था के द्योतक के रूप मं अधिक उल्लेखनीय है। वह प्रकृति के नियम (Law of nature) को अक्षुण्ण रखने वाला देवता है। वह द्यौ और पृथ्वी का संस्थापक है। वह जल का नियामक देवता भी है। नदियों में प्रवाह और झरनों में गति वरूण के कारण ही है। वरूण के सभी प्रकार के अभिशापों से मुक्ति की प्रार्थना की गई है। [19]

अवं दुग्धानि पित्र्या सृजः नः।
अवं या वयम् चकृम तनूभिः।
अवं राजन् पशुऽतृपम् न तायुम ं।
सृजं वत्सम् न दाम्नः वसिष्ठम्।।

मण्डूक या मेढक जैसे जीव के लिए भी ऋग्वैदिक साहित्य में लिखित है [20]

संवत्सरम ं शशयानाः ब्राह्मणाः व्रतऽचारिणः
वाचम् पर्जन्यऽजिन्वितां प्र मण्डूकाः अवादिषुः।।

वैदिक ग्रन्थों में देवताओं की वैदिक कल्पना विश्व में दिव्य और पवित्रता की विचारधारा को समाहित करके पर्यावरणीय नैतिकता के लिए एक आध्यात्मिक स्वरुप प्रदान करती है, जिससे मानवता के लिए इसकी रक्षा

करने और इसके साथ संतुलन में रहने की नैतिक अनिवार्यता उत्पन्न होती है। प्रति वर्ष 22 अप्रैल को आयोजित पृथ्वी दिवस के पर्यावरण के प्रति जागरुकता और प्रशंसा को प्रेरित करने के लिए अनाम पृथ्वी दिवस (Anonymous Earth Day) है। [21]

प्रकृति के साथ सामंजस्य रखना भारतीय संस्कृति का अभिन्न अंग रहा। वैदिक काल से ही विभिन्न पारंपरिक प्रथाओं, धार्मिक विश्वासों, अनुष्ठानों और भारतीयों के दैनिक जीवन में प्रचूर मात्रा में परिलक्षित होता रहा है। वैदिक धर्म प्रारम्भ से ही पर्यावरण के प्रति संवेदनशील दर्शन रहा है। भौतिकवादी संस्कृति में बढ़ते प्रदूषण से पर्यावरण का संरक्षण और सुरक्षा करना प्रति व्यक्ति के लिए अनिवार्य है।

सिंहावलोकन

वैदिक अवधारणा वस्तुतः प्राकृतिक शक्तियों के दैवीकरण पर केंद्रित है।

वस्तुतः वैदिक आर्य प्रकृतिवादी थे। ये प्रकृति के सानिध्य में रहते थे और 'प्रकृति' की सत्ता एवं उसकी ताकत का समझते एवं स्वीकार करते थे। इसीलिए समस्त वैदिक–दृष्टिकोण ही प्रकृतिवादी बन गया। उन्होंने प्रकृति से इतना सामीप्य स्थापित किया कि उन्होंने लोकमंगलकारी 'प्रकृति' से भावनात्मक एवं रक्त–संबंधों की कल्पना भी की। 'माताभूमि पुत्रोऽह पृथिव्या' समस्त लोकमण्डल को वैदिकों की अप्रतिम देन है।

वर्तमान में उपभोक्तवादी जीवन–मूल्यों से उत्पन्न हुए संकट से केवल वैदिक संस्कृति ही उपभोक्तावादी मूल्यों के विरोध में समग्रतावादी मूल्यों की स्थापना पर बल देती है। समग्रतावादी मूल्य का आशय है–मानव, पशु एवं पर्यावरण के प्रति नैतिक चिंतन। इस दृष्टिकोण से वैदिक विचार प्रणाली अत्यंत प्रासंगिक है। यह मनुष्य के साथ–साथ प्रकृति के निरोग्य बने रहने की भी कामना करता है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. ए0ए0 मैकडॉनेल, वैदिक माइथोलॉजी,मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1917, पृष्ठ 85
2. तत्रैव, 54
3. ऋग्वेद 5/30/6
4. 4.ए0ए0 मैकडॉनेल, ए वैदिक रीडर फार स्टूडेंट, दिल्ली 5वां संस्करण1980पृष्ठ137
5. तत्रैव, पृष्ठ सं0 21, ऋग्वेद 1/85/1
6. तत्रैव, पृष्ठ सं0 31.
7. ऋग्वेद 2/33/
8. ऋग्वेद 2/33/2
9. ऋग्वेद 2/33/3
10. 10.ए0ए0 मैकडॉनेल, ए वैदिक रीडर फार स्टूडेंट, दिल्ली, पृष्ठ संख्या 68.
11. तत्रैव, पृ0स ं0 79.
12. तत्रैव, पृ0स ं0 92.
13. तत्रैव, पृ0स ं0 105, उद्धृत ऋग्वेद 5/83/2
14. तत्रैव, पृ0स ं0 106, उद्धृत ऋग्वेद 5/83/5
15. ऋग्वेद 6/54/5
16. ऋग्वेद 6/54/7
17. ऋग्वेद 7/49/1
18. ऋग्वेद 7/49/4
19. ऋग्वेद 7/86/5
20. ऋग्वेद 7/103/1
21. http://en.wikipedia.org/wiki/Earth_Day (accessed on 2009)